भक्तिमती सन्त सहजोबाई

- डॉ. सोनवणे राजेंद्र 'अक्षत'

१८ वीं शती के प्रसिध्द संत चरणदास की परम - शिष्या भक्तिमती सहजोबाई के जन्म के संबंध में विध्दवानों में मतभेद है। कोई उनका जन्म राजपुताना के एक प्रतिष्ठित ढुसर (वैश्य) कुल में (विष्णुसवंत १७८०) २५ जुलाई १७२५ ई. मानता है। तो कोई २ अगस्त १७२५ मानता है। यहॉ बात स्पष्ट करनी आवश्यक है कि प्रसिध्द संत चरणदास जी का भी वंश ढुसर था और उनकी जाती बनिया थी। कई लोगों ने सहजोबाई का वंश भार्गव गिनाया है। सहजोबाई के पिता का नाम हरिप्रसाद और माता का नाम अनुपादेवी था। उनको चार भाई थे और परिवार में वह सबसे छोटी थी। जो अपने नाम के अनुरूप ही सहज होना चाहती थी। सहज रहकर ही उन्होने भार्गव वंश को सहज रहने की प्रेरणा दी। दो विन्दुंओ के बीच सरल रेखा खिचना कठिन है। सरल होना कठिन से कठिनतम कार्य है। कोई स्त्री अपना नाम सहजोबाई रखती है तो उसके पीछे गुढता है। वह सहज होना चाहती है। सहज होने की विसंगती यह है कि जब हम सहज होने का प्रयत्न करते है तो असहज हो जाते है। अगर प्रयत्न ना करें तो जो है जैसा है वैसा रह जाता है। अध्यात्म और धर्म की कई ऐसी पहेलियाँ है।

सहजोबाई के बारे में एक किंवदन्ती है कि उस समय की परंपरानुसार उनकी शादी ग्यारह वर्ष में की गयी। मगर बचपन में ही उनके पति का निधन हुआ जिसके बाद उन्होने सन्त चरणदास से दीक्षा लेते हुए साधिका जीवन यापित किया। एक दूसरी किंवदंन्ती के अनुसार ग्यारह वें वर्ष में उनकी शादी तय हुई। सहजो को दुल्हन का साज सिंगार पहनाया गया। इस ब्याह में स्वयं चरणदास जी आशीर्वाद देने मौजूद थे। दुल्हन का वह आलौकिक सौंदर्य देखकर चरणदास जी ने कहा -

सहजो तनिक सुहाग पर कहा गुदाये शीश।
मरना है रहना नहीं, जाना विश्वे बी॥

यह वचन सुनकर सहजो ने दुल्हन का साज सिंगार उतार दिया और कहा कि मैं शादी नहीं करूंगी।' उधर दिल्ली के भार्गव वंश के दुल्हे की बारात बाजे गाजे के साथ आ रही थी। आतीष बाजी के चलते बारात का घोडा बिदक गया और घबराकर एक पेड से जा टकराया। जिस कारण दुल्हे की ज गह पर ही मौत हो गयी। ऐसा कहते है कि इसके बाद सहजो बाई के माता-पिता, और चारोभाई त्रिलोक दर्शी सन्त चरणदास के शिष्य हो गये। श्री संत चरणदासजीने अपने संप्रदाय में स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार दिये। सहजोबाई उनकी प्रथम शिष्या थी

जिनको उन्होने अपने संप्रदाय की उत्तराधिकारी घोषित किया । अपनी कठिण साधना, और स्वभाव से सहजोबाईने योग विद्या को आगे बढ़ाया । सहजोबाई का एक मात्र ग्रंथ आज उपलब्ध होता है । 'सहजप्रकाश' जिसकी मूल पांडूलिपी सन १९२० में पहिली बार प्रकाशित हूई । इसका अंग्रेजी अनुवाद सन १९३१ में प्रकाशित हुआ । इस एकमात्र भक्तिरस प्रधान ग्रंथ में गुरू महिमा, गुरू की विशेषता साधु महिमा का अंग, प्रेम, अंग, आजपा गायत्री का अंग, पूर्व जन्म से लेकर मरणावस्था का वर्णन, निर्गुन संशय निरूपण का अंग आदि का कोमल कंठ से वर्णन किया है । उन्होने अपना सारा जीवन गुरूसेवा और गुरू महिमा में ही व्यतित किया । उनकी परम गुरू भक्ति के संबंध में एक कथा बड़ी प्रसिध्द है । ऐसा कहा जाता है कि एक दिन स्वयं भगवान उनकी भक्ति से प्रसन्न होकर उनके द्वार पधारे । सहजोबाई ने उनके तरफ देखा तक नहीं तब स्वयं भगवान ने कहा कि 'मैं साक्षात भगवान यहॉ आया हूँ कम से कम मुझे घर में तो बुला लो ।' तब सहजोबाई ने कहा कि 'मैंने थोडे ही तुम्हें बुलाया था । आप आये है तो आये । मेरे घर में केवल एक आसन है और उस आसन पर तो मेरे गुरू बैठते है । और मेरा गुरू तुमसे भी बड़ा है ।' भगवान ने कहा कि 'मै मेरे आसन की व्यवस्था करता हूँ तू मुझे अन्दर तो ले लो ।' तब जाकर सहजो मानी और भगवान को अन्दर आने को कहा । भगवान ने सहजो बाई से कहा कि 'मैं जहाँ भी जाता हूँ कुछ न कुछ देता हूँ । तु भी कोई वरदान माँग ।' मगर सहजो बाईने स्पष्ट नकार देते हुए कहा कि मेरे पास गुरू है इसलिए मुझे और कुछ पाने की इच्छा नहीं है । भगवान ने बहुत बार वरदान मांगने को कहां मगर सहजोबाई नम्रतासे मना करती रही । अन्त में रामजी ने कहा कि 'सहजो मुझे कोई काम दे दो । बहुत बार कहने पर सहजोबाई ने भगवान को कहा कि अब थोडै ही देर में मेरे गुरू आनेवाले है उनके आने पर उनपर चवर (पंखा) हिलाओ । और भगवान ने सहजोबाई का मान रखते हुए गुरू पर चबर हिलायी । इस संबंध में सहजोबाई कहती है -

राम तजूँ पै गुरू न विसास, गुरू के सत्र हरि कूँ न निहारू
हरि ने जन्म दियो जग माहीं । गुरू ने आवा गमन छुराही ।
हरि ने जजन्म दियो जग माहीं गुरू ने आवा गमन छुराहीं ।
हरि ने पाँच चारे दिये साथा, गुरू जोगी करि सवै छुटायो ।
या फिर एक दोहे में कहती है -
सहजो कार जगत के, गुरू बिन पुरे नाहिं ।
हरि तो गुरू किक्या मिलें, समझ देख मन आदि ॥

कवियित्री और साधिका सहजोबाई के जीवनकाल में ही उनकी साहित्य का प्रचार प्रसार देश के विविध क्षेत्रों दिल्ली, राजस्थान, बुन्देलखण्ड और बिहार में हो चुका था । 'ज्ञान योग' भी साधिका सहजोबाई का एक मात्र विशिष्ट ग्रंथ है । सहज प्रकाश के अन्त में इसे संकलित किया गया है । इसे 'शब्द' नाम दिया है । जिसमें जन्म बधाईं, गुरू महिमा, कृष्ण महिमा, ज्ञान महिमा आदि का उल्लेख है । सहजोबाई ने अपने कोकिल कंठ से संपूर्ण हिन्दी साहित्य में भक्ति का रस घोल कर अपनी वाणी को अमर कर दिया ।

सहज भक्ति हरि नाम को, तजो जगत से नहु ।
अपना तो कोई नहीं अपनी सगी न देहू
अचरण जीवन जगत में मरना निश्चय जान ।
सहजो अवसर जात है, हरि सौ करि पहचान
भीतर का भीतर खुले, के बाहर खुल जाए ।
देह खेह हो जाएंगी, जै ही जन्म गवाय ॥

सहजोबाई की गुरू निष्ठा लाजबाब है । जिसका कोई मुकाबला कर नही सकता । उनकी भक्ति, सत्यनिष्ठा, शालीनता, करूणा, क्षमा, सेवा योग अनुकरणीय के साथ ही प्रशंसनीय है । उनके गुरू भाई जोगजीत जी ने हरी 'लिलासागर' में सहजोबाई की सराह ना करते हुए लिखा है कि -

सत्यशील में सावंत सांची
जग कुल व्याधि सबन सीबांची
दया, क्षमा, की मूरली मानो
ज्ञान, ध्यान भरपूर सुजानो
साधुन को ऐसी सुखदायी
मानो भक्ति रूप धर आई
प्रेम लगत मांही अधिकाई
कभी औ ज्यौ मीराबाई
योग युक्ति बेराग्य सुहाये
ये अंग जनु भूषण छवि छाये
अनुभव दिए प्रकाश तु ऐसी,
पूरण शशियर चंदन जैसी

ऐसी इस दिल्ली की मीराबाई सन्त सहजोबाई ने २४ जनवरी १८०५ ई. में वृन्दावन में अपना देह त्याग दिया ।

संदर्भ ग्रंथ :

१) चरणदास और उनकी परम्परा में निर्गुणवादी महिला संत - डॉ. संगीता गोयला (संकलन)

२) चरणदासी संप्रदाय और उनका साहित्य - डॉ. श्याम सुन्दर शुक्ल

३) इन्टरनेट

४) स्व-अध्ययन सन्त साहित्य

डॉ. सोनवणे राजेंद्र 'अक्षत'

हिन्दी विभाग

स्वा. सावरकर महाविद्यालय, बीड जि.बीड-४३११२२

(महाराष्ट्र)